# प्रेमचंद



| | | |
|---|---|---|
| जन्म | : | 31 जुलाई 1880 । |
| निधन | : | 8 अक्टूबर 1936 । |
| जन्म-स्थान | : | ग्राम-लमही, वाराणसी, उत्तर प्रदेश । |
| मूलनाम | : | धनपत राय (आरंभिक लेखन नवाब राय के नाम से) |
| माता-पिता | : | आनंदी देवी एवं मुंशी अजायब राय । |
| शिक्षा | : | 1910 में इंटर, 1919 में बी० ए० । |
| वृत्ति | : | प्राइवेट ट्यूशन, अध्यापकी, जिला बोर्ड की सब-इंस्पेक्टरी, जालियाँवाला बाग हत्याकांड और असहयोग आंदोलन छिड़ने पर सरकारी नौकरी छोड़ी । |
| संपादन | : | मर्यादा, माधुरी, जागरण, हंस । |
| प्रमुख कृतियाँ | : | सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, निर्मला, गबन, कर्मभूमि, गोदान आदि मौलिक उपन्यास । लगभग तीन सौ कहानियाँ, मानसरोवर (आठ खंड) । अनेक निबंध, लेख, टिप्पणियाँ आदि 'विविध प्रसंग' (तीन खंड) संकलित, अनेक अनुवाद । |

हिंदी के महान कथाकार प्रेमचंद अब विश्व साहित्य की विभूति बन चुके हैं । भारतीय स्वाधीनता के बाद समय के गुजरने के साथ-साथ उनकी प्रसिद्धि देश-काल की सीमाओं का अतिक्रमण करती हुई वैश्विक रूप ग्रहण कर चुकी है । प्रेमचंद बहुत गहरे और विशिष्ट रूप में भारतीय नवजागरण एवं राष्ट्रीय आंदोलन की उपज और अभिव्यक्ति थे । राजनीतिक स्वाधीनता की परिणतियाँ शेष हैं और नवजागरण की समग्र चेतना का प्रसार अभी बाकी है । राजनीति के साथ-साथ समाज, संस्कृति, राष्ट्रीयता और मानववाद के पैमाने पर अनेक तरह के रचनात्मक परिवर्तन प्रकट और प्रच्छन्न रूप में अभी जारी हैं और जब तक यह प्रक्रिया चल रही है, प्रेमचंद और उनका साहित्य हमारे लोकतंत्र के भविष्य के साथ भी प्रासंगिक और अर्थपूर्ण रीति से जुड़े हुए हैं । हमारा लोकतंत्र अपनी सफलता और सिद्धि के लिए उनके साहित्य को अपनी प्रेरणा, कसौटी और पैमाने के रूप में ग्रहण कर सकता है । बदले हुए और बदलते हुए समय की चेतना के साथ उनका साहित्य हमारे लोकतंत्र के लिए भी एक अनिवार्य पाठ है ।

प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से ऊपर उठाकर जीवन के सार्थक रूपों से जोड़ने का काम किया था । उस युग के जीवन-समाज की समस्याओं—पराधीनता, जमींदारों-महाजनों और सरकारी अमलों द्वारा किसानों के शोषण, निर्धनता, अशिक्षा, अंधविश्वास, दहेज की कुप्रथा, स्त्रियों की पराधीनता, वृद्ध विवाह, बाल विवाह, विधवा समस्या, सांप्रदायिक वैमनस्य, जातिभेद, अस्पृश्यता और अनगिनत मध्यवर्गीय कुंठाएँ—इन सारी परिस्थितियों और समस्याओं ने उन्हें कथा रचना के लिए प्रेरित किया

हो । उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-छपटकर तीन रुपए कम्मल के लिए जमा किए थे । वह आज निकले जा रहे थे । एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था ।

X X X

पूस की अँधेरी रात ! आकाश पर तारे ठिठुरते हुए मालूम होते थे । हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े काँप रहा था । खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँ कर रहा था । दो में से एक को भी नींद न आती थी ।

हल्कू ने घुटनियों को गर्दन में चिपकाते हुए कहा – क्यों जबर जाड़ा लगता है ? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आए थे । अब खाओ ठंड, मैं क्या करूँ । जानते थे, मैं यहाँ हलुवा-पूरी खाने आ रहा हूँ, दौड़े-दौड़े आगे-आगे चले आए । अब रोओ नानी के नाम को ।

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलाई और अपनी कूँ-कूँ को दीर्घ बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया । उसकी श्वान बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को मेरी कूँ-कूँ से नींद नहीं आ रही है ।

हल्कू ने हाथ निकालकर जबरा की ठंडी पीठ सहलाते हुए कहा – कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठंडे हो जाओगे । यह राँड पछुआ न जाने कहाँ से बरफ लिए आ रही है । उठूँ तो फिर एक चिलम भरूँ । किसी तरह रात तो कटे ! आठ चिलम तो पी चुका । यह खेती का मजा है ! और एक-एक भागवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाए तो गर्मी से घबराकर भागे ! मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ-कम्मल । मजाल है कि जाड़े की गुजर हो जाए । तकदीर की खूबी है ! मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें !

हल्कू उठा और गड्ढे में से जरा-सी आग निकालकर चिलम भरी । जबरा भी उठ बैठा ।

हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा, पिएगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ, जरा मन बहल जाता है ।

जबरा ने उसके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से देखा ।

हल्कू – आज और जाड़ा खा ले । कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा । उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा ।

जबरा ने अगले पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिए और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया । हल्कू को उसकी गर्म साँस लगी ।

चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा और निश्चय करके लेटा कि चाहे जो कुछ हो अबकी सो जाऊँगा, पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कंपन होने लगा । कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट; पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था ।

जब किसी तरह से न रहा गया तो उसने जबरा को धीरे-से उठाया और उसके सिर को थपथपाकर उसे अपनी गोद में सुला दिया । कुत्ते की देह से जाने कैसी दुर्गंध आ रही थी, पर वह उसे अपनी गोद से चिपटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था । जबरा शायद समझ रहा था कि स्वर्ग यही है; और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी ! अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता । वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा में पहुँचा दिया ! नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था ।

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई । इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नई स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के ठंडे झोंकों को तुच्छ समझती थी । वह झपटकर उठा और छतरी के बाहर आकर भूँकने लगा । हल्कू ने उसे कई बार चुमकारकर बुलाया पर वह उसके पास न आया । हार में चारों तरफ दौड़-दौड़कर भूँकता रहा । एक क्षण के लिए आ भी जाता तो तुरंत ही फिर दौड़ता । कर्त्तव्य उसके हृदय में अरमान की भाँति उछल रहा था ।

X X X

एक घंटा और गुजर गया । रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया । हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया । फिर भी ठंड कम न हुई । ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रहा है । उसने झुककर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी हैं । सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े । ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सवेरा होगा । अभी पहर भर से ऊपर रात है ।

हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का बाग था । पतझड़ शुरू हो गई थी । बाग में पत्तियों का ढेर लगा हुआ था । हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियाँ बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ । रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे, तो समझे कोई भूत है । कौन जाने कोई जानवर ही छिपा बैठा हो; मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता ।

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिए और उनका एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिए बगीचे की तरफ चला । जबरा ने उसे आते देखा तो पास आया और दुम हिलाने लगा ।

हल्कू ने कहा - अब तो नहीं रहा जाता जबरू ! चलो, बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें ।

टाँठे हो जाएँगे तो फिर आकर सोएँगे ! अभी तो रात बहुत है ।

जबरा ने कूँ-कूँ करके सहमति प्रकट की और आगे-आगे बगीचे की ओर चला ।

बगीचे में घुप अँधेरा हुआ था और अंधकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था । वृक्षों से ओस की बूँदें टप-टप नीचे टपक रही थीं ।

एकाएक एक झोंका मेंहदी के फूलों की खुशबू लिए हुए आया ।

हल्कू ने कहा - कैसी अच्छी महक आई जबरू ! तुम्हारी नाक में भी सुगंध आ रही है ?

जबरा को कहीं जमीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गई थी । उसे चिचोड़ रहा था ।

हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा । जरा देर में पत्तियों का एक ढेर लग गया । हाथ ठिठुरे जाते थे । नंगे पाँव गले जाते थे । और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था । इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा ।

थोड़ी देर में अलाव जल उठा । उसकी लौ ऊपरवाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगीं । उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर सँभाले हुए हों । अंधकार के इस अनंत सागर में यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था ।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था । एक क्षण में उसने दोहर उतारकर बगल में दबा ली और दोनों पाँव फैला दिए, मानो ठंड को ललकार रहा हो, तेरे जी में जो आए सो कर । ठंड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था ।

उसने जबरा से कहा—क्यों जब्बर, अब ठंड नहीं लग रही है ?

जबरा ने कूँ-कूँ करके मानो कहा—अब क्या ठंड लगती ही रहेगी !

'पहले से यह उपाय न सूझी, नहीं इतनी ठंड न खाते ।'

जबरा ने पूँछ हिलाई ।

'अच्छा आओ इस अलाव को कूदकर पार करें । देखें, कौन निकल जाता है । अगर जल गए बच्चा, तो मैं दवा न करूँगा ।'

जबरा ने उस अग्निराशि की ओर कातर नेत्रों से देखा ।

'मुन्नी से कल न कह देना नहीं तो लड़ाई करेगी ।'

यह कहता हुआ वह उछला और अलाव के ऊपर से साफ निकल गया । पैरों में जरा लपट लगी; पर वह कोई बात न थी । जबरा आग के गिर्द में घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ ।

हल्कू ने कहा—चलो-चलो, इसकी सही नहीं । ऊपर से कूदकर आओ । वह फिर कूदा

और अलाव के इस पार आ गया ।

x x x

पत्तियाँ जल चुकी थीं । बगीचे में फिर अँधेरा छाया था । राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा जाग उठती थी; पर एक क्षण में फिर आँखें बंद कर लेती थी ।

हल्कू ने फिर चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा। उसके बदन में गर्मी आ गई थी; पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था।

जबरा ज़ोर से भूँककर खेत की ओर भागा । हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का एक झुंड उसके खेत में आया है । शायद नीलगायों का झुंड था । उनके कूदने-दौड़ने की आवाजें साफ कान में आ रही थीं । फिर ऐसा मालूम हुआ कि वह खेत में चर रही हैं । उनके चबाने की आवाज चर-चर सुनाई देने लगी ?

उसने दिल में कहा—नहीं, जबरा के होते कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता । नोच ही डाले । मुझे भ्रम हो रहा है । कहाँ ! अब तो कुछ नहीं सुनाई देता । मुझे भी कैसा धोखा हुआ ।

उसने जोर से आवाज लगाई—जबरा, जबरा ।

जबरा भूँकता रहा । उसके पास न आया ।

फिर खेत के चरे जाने की आहट मिली । अब वह अपने को धोखा न दे सका । उसे अपनी जगह से हिलना जहर लग रहा था । कैसा दंदाया हुआ बैठा था । इस जाड़े-पाले में खेत में जाना, जानवरों के पीछे दौड़ना असूझ जान पड़ा । वह अपनी जगह से न हिला ।

उसने जोर से आवाज लगाई—लिहो-लिहो ! लिहो ! !

जबरा भूँक उठा । जानवर खेत चर रहे थे । फसल तैयार है । कैसी अच्छी खेती थी; पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हैं ।

हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन कदम चला, पर एकाएक हवा का ऐसा ठंडा, चुभनेवाला, बिच्छू के डंक का-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठंडी देह को गर्माने लगा ।

जबरा अपना गला फाड़े डालता था, नीलगायें खेत का सफाया किए डालती थीं । और हल्कू गर्म राख के पास शांत बैठा हुआ था । अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ से जकड़ रखा था ।

उसी राख के पास गर्म जमीन पर वह चादर ओढ़कर सो गया ।

सवेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ धूप फैल गई थी । और मुन्नी कह रही

थी – क्या आज सोते ही रहोगे ? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया।

हल्कू ने उठकर कहा–क्या तू खेत से होकर आ रही है ?

मुन्नी बोली – हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया। भला ऐसा भी कोई सोता है ! तुम्हारे मड़ैया डालने से क्या हुआ ।

हल्कू ने बहाना किया–मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है । पेट में ऐसा दरद हुआ कि मैं ही जानता हूँ ।

दोनों फिर खेत की डाँड़ पर आए । देखा, सारा खेत रौंदा पड़ा हुआ है, और जबरा मड़ैया के नीचे चित लेटा है ।

मानो प्राण ही न हो ।

दोनों खेत की दशा देख रहे थे । मुन्नी के मुख पर उदासी छाई थी । पर हल्कू प्रसन्न था ।

मुन्नी ने चिंतित होकर कहा–अब मजूरी करके मालगुंजारी भरनी पड़ेगी ।

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा–रात की ठंड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा ।

❑❑❑

## अभ्यास

**पाठ के साथ**

1. हल्कू कंबल के पैसे सहना को देने के लिए क्यों तैयार हो जाता है ?
2. मुन्नी की नजर में खेती और मजूरी में क्या अंतर है ? वह हल्कू से खेती छोड़ देने के लिए क्यों कहती है ?
3. हल्कू खेत पर कहाँ और कैसे रात बिता रहा था ?
4. हल्कू ने जबरा को आगे की ठंढ काटने के लिए क्या आश्वासन दिया ?
5. हल्कू की आत्मा का एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था । इसके पीछे क्या कारण था ?
6. हल्कू और जबरा की मैत्री को लेखक ने अनोखा क्यों कहा है ?
7. हल्कू कैसे जान सका कि रात अभी पहर भर बाकी है ?
8. जब ठंढ बर्दाश्त के बाहर हो जाती है तो हल्कू उसका सामना कैसे करता है ?
9. लेखक ने पवन को निर्दय क्यों कहा है ? निर्दय पवन द्वारा पत्तियों का कुचलना से आप क्या समझते हैं ?

10. आग तापते हुए हल्कू कैसी क्रीड़ा करता है ? अपने शब्दों में वर्णन करें ।
11. हल्कू और मुन्नी दोनों के चरित्र की विशेषताएँ बताएँ । आपको इन दोनों में अधिक महत्त्वपूर्ण कौन लगा ?
12. यह कहानी भारतीय किसान के मजदूर बनने की त्रासदी की ओर संकेत करती है । कहानी के आधार पर स्पष्ट करें ।
13. 'पूस की रात' कहानी में 'जबरा' एक प्रमुख पात्र है । कहानी में उसका क्या महत्त्व है ?
14. निम्नलिखित वाक्यों की सप्रसंग व्याख्या करें –
    (क) बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है ।
    (ख) हल्कू ने रुपए लिए और इस तरह बाहर चला मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो ।
    (ग) अंधकार के उस अनंत सागर में यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था ।
    (घ) तकदीर की खूबी है । मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें ।
15. 'कर्त्तव्य उसके हृदय में अरमान की भाँति उछल रहा था ।'– इस कथन के आलोक में कहानी में जबरा की भूमिका का मूल्यांकन करें ।
16. 'दोनों खेत की दशा देख रहे थे । मुन्नी के मुख पर उदासी छाई हुई थी । पर हल्कू प्रसन्न था ।' ऐसा क्यों ? मुन्नी की उदासी और हल्कू की प्रसन्नता का क्या कारण है ?

## पाठ के आस-पास

1. प्रेमचंद ने किसानों के जीवन पर कई कहानियाँ लिखी हैं । ऐसी पाँच कहानियों का संग्रह करें और उनके कथ्य पर कक्षा में चर्चा करें ।
2. भारतीय कृषकों की प्रमुख समस्याएँ क्या हैं ? इस विषय पर एक निबंध लिखें ।
3. प्रेमचंद की कई कहानियों में पशु पात्र हैं । ऐसी कुछ कहानियों का संकलन करें और मित्रों से इन कहानियों पर चर्चा करें ।
4. प्रेमचंद का महान उपन्यास 'गोदान' पूस की रात का ही औपन्यासिक विस्तार है ? इस विषय पर अपने शिक्षक एवं मित्रों से चर्चा करें ।
5. प्रेमचंद ने उर्दू में लिखना शुरू किया था । इसका प्रभाव आद्यंत उनकी भाषा पर रहा । उदाहरण के लिए इसी कहानी में आप 'ठंढ' के लिए 'ठंड' का प्रयोग पाएँगे । इसी पुस्तक में आप 'सिक्का बदल गया', 'नया कानून' जैसी कहानियों में भी ऐसे प्रयोग पाएँगे । आप पुस्तक में आए इस प्रयोग को सावधानीपूर्वक चिह्नित करें ।

## भाषा की बात

1. वाक्य प्रयोग द्वारा इन मुहावरों का अर्थ स्पष्ट करें –
   गला छूटना, बला टलना, ठंढा हो जाना, आँख तरेरना, बाज आना, भौंहें ढीली पड़ना, आहट मिलना
2. 'गला छूटना', 'आँख तरेरना' की तरह शरीर के अन्य अंगों की सहायता से दस मुहावरों को अर्थ सहित लिखें एवं उनका वाक्यों में प्रयोग करें ।

3. 'उठ बैठा' संयुक्त क्रिया का उदाहरण है । ऐसे पाँच अन्य उदाहरण दें ।
4. निम्नलिखित विशेषणों से भाववाचक संज्ञा बनाएँ –
ढीली, दीर्घ, ठंडी, विशेष, गर्म, प्रसन्न
5. 'पेट में ऐसा दरद हुआ कि मैं ही जानता हूँ'–यहाँ 'मैं ही जानता हूँ' संज्ञा उपवाक्य है । 'मैं नहीं जानता कि वह कहाँ है' में 'वह कहाँ है' संज्ञा उपवाक्य है । इसी तरह निम्नलिखित वाक्यों से संज्ञा उपवाक्य छाँटें –
(क) चिलम पीकर हल्कू लेटा और निश्चय करके लेटा कि चाहे जो कुछ भी हो अबकी सो जाऊँगा ।
(ख) हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का एक झुंड उसके खेत में आया है ।
6. निम्नलिखित वाक्यों में मिश्र और संयुक्त वाक्य चुन कर उन्हें सरल वाक्य में बदलें–
(क) हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा ।
(ख) राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा जाग उठती थी ।
(ग) पेट में ऐसा दरद हुआ कि मैं ही जानता हूँ ।
(घ) यह कहता हुआ वह उछला और अलाव के ऊपर से साफ निकल गया ।
(ड.) मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है ।
7. हल्कू और लेखक की भाषा में फर्क है । आप बताएँ कि यह फर्क क्यों है ? इसके कुछ उदाहरण पाठ से चुनकर लिखें ।
8. वाक्य प्रयोग द्वारा लिंग-निर्णय कीजिए–
ढेर, अलाव, लौ, दोहर, जी, गर्व, ठंढ, पूँछ, चादर, राख, शीत, झुंड, सत्यानाश

**शब्द निधि**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| घुड़कियाँ | : | फटकार, धमकियाँ | स्फूर्ति | : | फुर्ती |
| मजूरी | : | मजदूरी | अकर्मण्य | : | काम न करने वाला, आलसी |
| खैरात | : | मुफ्त | दंदाया | : | गरमाया |
| तत्परता | : | शीघ्रता | कम्मल | : | कंबल |
| अरमान | : | अभिलाषा | हार | : | खेत-बधार |
| धधकाना | : | भड़काना | भारी-भरकम | : | वजनदार |
| टाँठे | : | करारा, दृढ़ | डील | : | आकार |
| अलाव | : | जहाँ आग तापी जाती है | पछुआ | : | पश्चिमी हवा जो जाड़ों में बहुत ठंढी होती है |
| मालगुजारी | : | उपज पर दिया जाने वाला कर | | | |
| भीषण | : | भयानक | दोहर | : | दुहरी चादर |
| दीर्घ | : | बड़ा | असूझ | : | बेवकूफी |
| श्वान | : | कुत्ता | मड़ैया | : | झोपड़ी |

# रामचंद्र शुक्ल



| | | |
|---|---|---|
| जन्म | : | 1884 ( आश्विन पूर्णिमा, सं० 1941 ) । |
| निधन | : | 2 फरवरी 1941, काशी । |
| जन्म-स्थान | : | अगोना, जिला - बस्ती, उत्तर प्रदेश । |
| पिता | : | पं० चंद्रबली शुक्ल । |
| शिक्षा | : | ऐंग्लो संस्कृत जुबली स्कूल, मिर्जापुर से 1898 में उर्दू और अंग्रेजी के साथ मिडिल । लंदन मिशन स्कूल मिर्जापुर से 1901 में स्कूल की परीक्षा । कायस्थ पाठशाला, प्रयाग में इंटर में नामांकन, किंतु पढ़ाई अधूरी रही । स्वाध्याय द्वारा प्रभूत विद्यार्जन । |
| वृत्ति | : | 1904 में लंदन मिशन स्कूल में ड्राइंग टीचर । 1908 में 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की परियोजना–'हिंदी शब्द सागर' में सहायक संपादक । धनार्जन के लिए अनुवाद आदि । 'नागरी प्रचारिणी सभा' पत्रिका का संपादन । 1921 से काशी हिंदू विश्वविद्यालय में अध्यापन, 1937 में हिंदी विभागाध्यक्ष, काशी हिंदू विश्वविद्यालय । |
| प्रमुख कृतियाँ | : | मधुस्रोत ( कविता संग्रह ), गोस्वामी तुलसीदास, जायसी ग्रंथावली की भूमिका, भ्रमरगीत सार, रस मीमांसा ( सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ), त्रिवेणी ( सं० कृष्णानंद ) – ( पाठालोचन और आलोचना ) । हिंदी साहित्य का इतिहास ( साहित्य का इतिहास ), श्री राधाकृष्णदास की जीवनी ( जीवनी ), चिंतामणि, भाग-1, चिंतामणि, भाग-2 ( सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ), चिंतामणि, भाग - 3 ( डॉ० नामवर सिंह ) - ( सभी निबंध ) । विश्वप्रपंच ( लंबी भूमिका के साथ अनुवाद ), कल्पना का आनंद, शशांक, बुद्धचरित ( सभी अनुवाद ) । अन्य कई अनुवाद, लेख, टिप्पणियाँ, विविध विषयक निबंध-प्रबंध पत्र-पत्रिकाओं में बिखरे । |

आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी साहित्य के महान आलोचक, इतिहासकार, निबंधकार और लेखक थे । इतिहास, आलोचना और निबंध के क्षेत्र में उनका अवदान युग प्रवर्तक और अप्रतिम है । हिंदी भाषा और साहित्य की, विशेष रूप से हिंदी आलोचना और चिंतन की, आधुनिक छवि और पहचान, मूलत: उनके द्वारा ही प्राप्त है । स्वभावत: समय के साथ-साथ उनका महत्त्व और अधिक बढ़ता तथा निखरता जा रहा है ।

आचार्य शुक्ल ने ही हिंदी के सैद्धांतिक और व्यावहारिक साहित्य चिंतन को वैश्विक ऊँचाई, गहराई, व्यापकता और गंभीरता दी । उन्होंने साहित्य को जीवन-जगत की वास्तविकता और गतिशील यथार्थ के सान्निध्य तथा विकासधर्मी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रखते हुए विश्लेषित और परिभाषित किया । दर्शन, मनोविज्ञान, इतिहास और समाजशास्त्र का अपनी कल्पनाशील अंतर्दृष्टि में समाहार और विनियोग करते हुए उन्होंने भाषा-साहित्य की संपूर्ण परंपरा को युगानुरूप नई अर्थवत्ता से उद्‌भासित कर दिया । आचार्य शुक्ल

का साहित्य चिंतन पुस्तकों में शुरू होकर उन्हीं में समाप्त नहीं हो जाता । उनकी आलोचना किताबों से उठकर हमारे जीवन में आश्रय और सहभागिता चाहती है । आचार्य शुक्ल के साहित्य चिंतन और आलोचना का राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन, देश और समाज की अवस्थिति तथा दुनिया के पटल पर ज्ञान-विज्ञान के विकास से गहरा संबंध था । वे साहित्य को समय, समाज और परिवेश से प्रभावित मानते थे किंतु यह भी मानते थे कि साहित्य इन सबको उतना ही प्रभावित भी करता है ।

आचार्य शुक्ल की भाषा और विवेचन शैली गंभीर और प्रौढ़ है, किंतु उतनी ही ठेठ, सरल और बोधगम्य भी । लेखक और आलोचक होने के साथ-साथ वे हिंदी भाषा साहित्य के महान अध्यापक भी थे । यहाँ प्रस्तुत पाठ 'कविता की परख' 'चिंतामणि' भाग-3 से लिया गया है जिसे प्रख्यात आलोचक डॉ० नामवर सिंह ने 1983 में संपादित किया । 'कविता की परख' मूलत: हाई स्कूल के छात्रों के लिए लिखा गया निबंध है जो पहली बार आचार्य शुक्ल द्वारा स्कूल के छात्रों के लिए संपादित पुस्तक 'हिंदी गद्य चंद्रिका' में 1938 में प्रकाशित हुआ था । विशेष रूप से स्कूली छात्रों के लिए लिखे गए इस निबंध की आज भी उतनी ही सार्थकता और प्रासंगिकता है । कविता को परखने के बुनियादी साधन आज भी वे ही हैं जिनकी सीख आचार्य ने दी है । इन साधनों की आधारभूत सीख आज कहीं अधिक प्रासंगिक है ।

◆ ◆ ◆

**"कविता वह साधना है जिसके द्वारा शेष सृष्टि के साथ मनुष्य के रागात्मक संबंध की रक्षा और निर्वाह होता है ।**

**कविता के द्वारा हम संसार के सुख-दुःख, आनंद और क्लेश आदि यथार्थ रूप से अनुभव करने में अभ्यस्त होते हैं जिससे हृदय की स्तब्धता हटती है और मनुष्यता आती है ।**

**कविता सृष्टि-सौंदर्य का अनुभव कराती है और मनुष्य को सुंदर वस्तुओं में अनुरक्त और कुत्सित वस्तुओं से विरक्त करती है ।"**

**(कविता क्या है)**

**–आचार्य रामचंद्र शुक्ल**

# कविता की परख

कविता का उद्देश्य हमारे हृदय पर प्रभाव डालना होता है, जिससें उसके भीतर प्रेम, आनंद, हास्य, करुणा, आश्चर्य इत्यादि अनेक भावों में से किसी का संचार हो । जिस पद्य में इस प्रकार प्रभाव डालने की शक्ति न हो, उसे कविता नहीं कह सकते । ऐसा प्रभाव उत्पन्न करने के लिए कविता पहले कुछ रूप और व्यापार हमारे मन में इस ढंग से खड़ा करती है कि हमें यह प्रतीत होने लगता है कि वे हमारे सामने उपस्थित हैं । जिस मानसिक शक्ति से कवि ऐसी वस्तुओं और व्यापारों की योजना करता है और हम अपने मन में उन्हें धारण करते हैं, वह कल्पना कहलाती है । इस शक्ति के बिना न तो अच्छी कविता ही हो सकती है, न उसका पूरा आनंद ही लिया जा सकता है । सृष्टि में हम देखते हैं कि भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुओं को देखकर हमारे मन पर भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रभाव पड़ता है । किसी सुंदर वस्तु को देखकर हम प्रफुल्ल हो जाते हैं, किसी अद्‌भुत वस्तु या व्यापार को देखकर आश्चर्यमग्न हो जाते हैं, किसी दुख के दारुण दृश्य को देखकर करुणा से आर्द्र हो जाते हैं । यही बात कविता में भी होती है ।

जिस भाव का उदय कवि को पाठक के मन में कराना होता है, उसी भाव को जगानेवाले रूप और व्यापार वह अपने वर्णन द्वारा पाठक के मन में लाता है । यदि सौंदर्य की भावना उत्पन्न करके मन को प्रफुल्ल और आह्लादित करना होता है तो कवि किसी सुंदर व्यक्ति अथवा किसी सुंदर और रमणीय स्थल का शब्दों द्वारा चित्रण करता है । सूरदासजी ने श्रीकृष्ण के अंग-प्रत्यंग का जो वर्णन किया है उसे पढ़कर या सुनकर मन सौंदर्य की भावना में लीन हो जाता है । गोस्वामी तुलसीदासजी की गीतावली में चित्रकूट का यह वर्णन कितनी सुंदरता हमारे समक्ष लाता है –

**"सोहत स्याम जलद मृदु धोरत धातु-रंगमगे शृंगनि ।"**

इसी प्रकार भय का भाव उत्पन्न करने के लिए कवि जो रूप सामने रखेगा वह बहुत ही विकराल होगा । जैसा कुंभकरण का रूप रामचरितमानस में है । राम के वन-गमन पर अयोध्या की दशा का जो वर्णन रामायण में है, उससे किसका हृदय दुख और करुणा का अनुभव न करेगा ?

अपने वर्णनों में कवि लोग उपमा आदि का भी सहारा लिया करते हैं । वे, जिस वस्तु के वर्णन का प्रसंग होता है, उस वस्तु के समान कुछ और वस्तुओं का उल्लेख भी किया करते हैं; जैसे – मुख को चंद्र या कमल के समान, नेत्रों को मीन, खंजन, कमल आदि के समान, प्रतापी या तेजस्वी को सूर्य के समान; कायर को शृगाल के समान, वीर और पराक्रमी को सिंह के समान

5. आलोचना के अतिरिक्त शुक्ल जी ने और क्या-क्या लिखा है ?
6. 'उनकी आलोचना किताबों से उठकर हमारे जीवन में आश्रय और सहभागिता चाहती है' लेखक परिचय के इस वाक्य की पुष्टि पाठ से करें ।

**भाषा की बात**

1. निम्नलिखित विशेष्यों के लिए उपयुक्त विशेषण दें –
   मुख, चरण, नेत्र, सूर्य, चंद्रमा, हवा, कमल
2. 'ता' प्रत्यय से इस पाठ में कई शब्द हैं, जैसे- निपुणता, गंभीरता आदि । ऐसे शब्दों को चुन कर लिखें ।
3. निम्नलिखित शब्दों से 'इक' प्रत्यय लगाकर शब्द बनाएँ –
   हृदय, करुणा, शब्द, मुख, प्रकृति, सिद्धांत, वास्तव, बुद्धि, मर्म, स्वभाव
4. पाठ से द्वंद्व समास के उदाहरण चुनें ।
5. निम्नलिखित शब्दों से विशेषण बनाएँ –
   माधुर्य, कांति, मुख, उपमा, वास्तव, रंग, रमणीयता, मानव
6. निम्नलिखित शब्दों के विपरीतार्थक शब्द लिखें –
   उपस्थित, उदय, स्थल, कायर, बड़ाई, परिमाण, अधिक, उचित
7. निम्नलिखित शब्दों के संज्ञा रूप लिखें –
   हार्दिक, सुंदर, विकराल, पराक्रमी, वास्तविक, मधुर, उचित

**शब्द निधि**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उत्साह | : | खुशी, उमंग | आर्द्र | : | भींगा हुआ |
| करुणा | : | दया, वेदना | रमणीय | : | सुंदर |
| व्यापार | : | क्रिया, गतिविधि | समक्ष | : | सामने |
| दारुण | : | असहनीय | विकराल | : | भयानक |
| आह्लादित | : | प्रसन्न | श्रृगाल | : | सियार |
| प्रतापी | : | प्रभावशाली, पराक्रमी | कांति | : | चमक |
| निपुणता | : | दक्षता | व्यंजना | : | व्यक्त या प्रकट करना |
| उग्र | : | उत्तेजित | खंजन | : | चंचल आँखों वाला विशिष्ट पक्षी |
| अधीरता | : | बेचैनी | कुतूहल | : | अचरज, विस्मय |
| परिज्ञान | : | विशिष्ट ज्ञान | दूषण | : | दोष, कलंक |
| बोध | : | समझ | परिमाण | : | मात्रा |
| प्रफुल्ल | : | प्रसन्न | | | |



# विष्णुभट गोडसे वरसईकर



| | | |
|---|---|---|
| जन्म | : | 1828 । |
| जन्म-स्थान | : | ग्राम-वरसई, रायगढ़, महाराष्ट्र । |
| पिता | : | पं० बालकृष्ण भट । |
| शिक्षा | : | स्वाध्याय द्वारा परंपरागत रूप में संस्कृत, मराठी । |
| वृत्ति | : | पुरोहिती-कर्मकांड एवं कृषि । |
| कृति | : | एकमात्र 'माझा प्रवास' (मेरा प्रवास) मूल मराठी में । |
| व्यक्तित्व | : | विद्वान, तेजस्वी, ऊँचे, भव्य और गौर । |

भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम – 1857 के गदर का आँखों देखा विस्तृत विवरण प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत करनेवाले भारतीय पं० विष्णुभट गोडसे वरसईकर कोई पेशेवर लेखक नहीं थे । वे आजीविका से कर्मकांडी और पुरोहित थे । थोड़ी बहुत खेती भी थी, किंतु अपर्याप्त । परिवार को ऋणमुक्त करने तथा उसके समुचित निर्वाह के लिए कुछ धन प्राप्त करने के प्रयोजन से वे उत्तर भारत की ओर आए थे, किंतु सन् 57 के गदर में फँस गए । उन्हें मथुरा जाना था जहाँ ग्वालियर की राजमाता वायजाबाई शिंदे सर्वतोमुखी यज्ञ करवाने जा रही थीं । यज्ञ में पौरोहित्य के द्वारा दान में कुछ आय हो जाने की प्रत्याशा थी उन्हें । मार्च 57 में बैलगाड़ी से वे पुणे पहुँचे और वहाँ से इंदौर, अहमदनगर, धुलिया, सतपुड़ा होते हुए मध्यप्रदेश में महू पहुँचे जहाँ उन्हें सिपाहियों से क्रांति की खबरें पहली बार मिलीं । सिपाहियों के मना करने पर भी वे आगे बढ़ते हुए उज्जैन, धारा होते हुए ग्वालियर पहुँचे । इस बीच उन्होंने गदर की घटनाओं को नजदीक से प्रत्यक्ष देखा-सुना । वे झाँसी आकर फँस गए । वहाँ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के प्रत्यक्ष संपर्क में आए और उनका आश्रय और विश्वास प्राप्त कर काफी दिनों तक उनके साथ किले में भी रहे । अनेक कष्ट सहकर उन्होंने उत्तर भारत के कई तीर्थों की यात्रा की और लगभग ढाई साल बाद अपने गाँव वरसई वापस लौटे । अपने यजमान महाराष्ट्र के प्रसिद्ध विद्वान श्री चिंतामणि विनायक वैद्य के आग्रह-अनुरोध पर उन्होंने यात्रा का आँखों देखा-भुगता सारा हाल अपनी उत्कृष्ट स्मृति के आधार पर लिखा – 'माझा प्रवास' !

हिंदी के प्रसिद्ध कथाकार और लेखक अमृतलाल नागर ने 'माझा प्रवास' का प्रामाणिक भाषांतर बीसवीं शती के चौथे दशक में ही 'आँखों देखा गदर' नाम से किया था । यह पाठ उसी भाषांतरित रूप से संकलित-संपादित कर यहाँ प्रस्तुत किया गया है । पाठ में पं० विष्णुभट गोडसे वरसईकर के झाँसी प्रवास और रानी लक्ष्मीबाई से जुड़े संस्मरण अविकल रूप में प्रस्तुत हैं ।

◆ ◆ ◆

# आँखों देखा गदर

चैत का महीना आन पहुँचा, गर्मी के झोंके लगने लगे । वसंत के जाने के बाद ग्रीष्म ऋतु का राज्य स्थापित हुआ । यह तो निश्चित हो ही चुका था कि झाँसी में लड़ाई होगी, इसलिए कुछ सावधान नागरिक अपने औरत-बच्चों और धन-दौलत को लेकर ग्वालियर चले गए ।

चैत बीता बैशाख लगा । एक दिन शहर के दक्षिण की ओर मैदान में तंबू दिखाई पड़ने लगे और इधर-उधर आग रोशनी भी दिखाई देती थी । साँझ के समय हम लोग किले के ऊँचे बुर्ज पर से देखने लगे तो शहर के गाड़कर पल्टनें उतरी हुई दिखाई रही थी । चढ़ाई हो गई है यह किले पर और शहर की दीवारों लगीं । फाटकों के पास सिपाहियों एक-एक बहादुर और भरोसे के



झाँसी की रानी

दूसरे दिन सवेरे शहर की लिए अंग्रेजों के बीस-पचीस सवार की तरफ आकर दीवार की तरफ के दक्ष और होशियार गोलंदाज ने दस-पाँच मरे; बाकी भाग गए । चारों ओर जगह-जगह पर तंबू दीं । चारों तरफ हलचल मच देखकर रात में बाई साहब खुद पर घूम-घूम कर बंदोबस्त करने की टुकड़ियाँ और उनके साथ सरदार नियुक्त कर दिए गए । दीवार के पास मोर्चा बाँधने के दौड़ते हुए आए । किले के पश्चिम बढ़ने लगे वैसे ही हमारी तरफ तोप में पलीता रख दिया । इस तरह पहले दिन अंग्रेजी फौज शहर के चारों तरफ मोर्चे बाँधने का प्रयत्न करती थी, लेकिन हमारे गोलंदाज उनके चिथड़े उड़ाकर रख देते थे । दूसरे दिन भी इसी तरह मोर्चा बाँधने के लिए अंग्रेज पिले पड़े थे; लेकिन मोर्चा न बँध सका । शहर में जो बड़े-बूढ़े लोग थे, उन्हें यह मालूम था कि शहर या किले पर कहाँ से मोर्चा लागू होता है । लेकिन यह जानकारी भी बहुत थोड़े लोगों को थी । अंदर के षड्यंत्र के कारण कहो या बाहर ही अंग्रेजों को इस बात का जानकार मिलां, यह कहो – तीसरे दिन अंग्रेज मौके समझ गए । फिर रात होने पर उन्होंने सब ठिकाने साधकर साधारण मोर्चे बाँधे और चार घड़ी रात रहे किले के पश्चिमी बाजू पर अंग्रेजों की दक्षिण तरफ की गरनाली तोप चलने लगी । इधर वायव्य दिशा की ओर भी तोप गोले बरसाने लगीं । शहर पर वार चलने लगी । यह देखकर बाई साहब को बड़ा दुख हुआ और निराशा की पहली सीढ़ी से उनका पैर लगा । परंतु वह जरा भी

न डगमगाई । जगह-जगह पर और अधिक बहादुर तैनात किए और स्वयं भी खाने-पीने की चिंता छोड़कर किले और शहर की दीवारों पर खपने लगीं।

शहर पर तोप के गोले शुरू होने से रैयत को बड़ा त्रास हुआ । एकाध गोला रास्ते में पड़ा तो फूटकर दस-बीस-पचास को घायल करता और दस-पाँच मारे जाते । किसी घर पर पड़ा तो वह तो भस्म ही हो जाता था; उसके धक्के से आस-पास के छोटे घर खंडहर होकर गिर पड़ते थे । आग लग जाती थी । परंतु बाई साहब ने शहर में बंबों का इंतजाम बड़ा अच्छा कर रखा था । आग लगी नहीं कि बंबे तुरंत बुझाते थे । शहर में धंधा-रोजगार बिलकुल बंद हो गया था। इधर-उधर आने-जाने से लोग घबराते थे ।

इधर बाई साहब ने भी अपनी तरफ से अंग्रेजों की जबर्दस्त नाकाबंदी शुरू की । अंग्रेजों की तरफ के बहुत से लोग मारे गए । चौथे दिन दोपहर में अंग्रेजों ने किले के दक्षिण बुर्ज की तोप बंद कर दी । उस तोप पर कोई गोलंदाज टिक ही न पाता था। लोगों में बड़ी हौलदिली फैल गई । तभी पश्चिमी बुरूजवाले हमारे गोलंदाज ने अपने मोर्चे की तोप दक्षिण की तरफ लगा दी, दूरबीन से बेचूक निशाना साधकर तोप में पलीता लगाया और तीसरे धमाके में ही अंग्रेजों के उत्तम गोलंदाज को ठंडा कर दिया । इस तरह दक्षिण की तोप फिर चालू करके उसने अंग्रेजों की तोप बंद कर दी ।

रात में शहर और किले पर गोले पड़ते थे । पचास-साठ सेर का गोला जब तोप से उड़ता था तो एक छोटी-सी गेंद-सा दिखाई देता था । ये लाल भड़के गोले रात्रि के अंधकार में गेंद की तरह इधर-उधर आसमान में उड़ते हुए बड़े विचित्र लगते थे । दिन में सूर्य के प्रकाश में अप्रतिभ हो जाते थे । आदमी को ऐसा लगता था कि यह गोला मेरे ऊपर ही आकर पड़ेगा । लेकिन वह सात-आठ सौ कदम जाकर फूटता था । दिन-रात लगातार युद्ध होने से शहर जर्जर हो गया । पाँचवे-छठे दिन भी इसी तरह युद्ध चलता रहा । कभी पहर-डेढ़ पहर तक बाई साहब की जय होकर अंग्रेजों का नाश होता था और उनकी तोपें बंद हो जाती थीं । फिर कभी अंग्रेजों की जीत होने लगती थी – हमारी पल्टन घबराने लगती थी और तोपें बंद हो जाती थीं । सातवें दिन सूर्यास्त के बाद पश्चिमी मार्चे की तोप बंद हो गई । वहाँ कोई ठहर ही न पाता था और शत्रुओं की तोपों ने हमारा वह मोर्चा भी तोड़ डाला । रात में कुशल कारीगरों को चुपचाप बुर्ज पर चढ़ाया गया । ईंटे और गारा वगैरह नीचे से ऊपर पहुँचाने के लिए मनुष्यों की नसेनी-सी खड़ी कर दी गई थी। कारीगर भी बड़े ही चतुर और अपने काम में निपुण थे । दुश्मनों को आहट भी न मिली और रातोंरात मोर्चा बाँधकर तोप चालू कर दी गई । उस समय अंग्रेज गाफिल पड़े थे । उनका बड़ा नुकसान हुआ और पहर भर तक उनकी दो तोपें बंद पड़ी रहीं ।

आठवें दिन बड़ी प्रलय मची और बड़ा ही घनघोर युद्ध हुआ । बहादुर लोग जोर-जोर से एक-दूसरे को बढ़ावा दे रहे थे । बंदूकों और तोपों की आवाज के सिवा और कुछ सुनाई ही न देता था । नरसिंहे, नगाड़े, बिगुल आदि बज रहे थे । धूल और धुआँ, बारूद, गोले, बंदूकें और

बाजों की आवाज, मनुष्यों के चीत्कार सब मिलकर बड़ा ही भयंकर वातावरण उपस्थित कर रहे थे । अंग्रेजी फौजों ने बड़ी तबाही मचाई । परकोटे पर के सिपाही और गोलंदाज एक के बाद दूसरे गिरते थे और उनकी जगह नए लोग खड़े किए जाते थे । बाई साहब को बड़ी मेहनत करनी पड़ रही थी । चारों तरफ घूम-घूमकर सारा प्रबंध कर रही थीं । जहाँ जरा कमजोरी देखी वहीं आदमी बढ़ाए, आदमियों को हिम्मत दी परंतु उन्हें बड़ी ही चिंता थी कि पेशवा की तरफ से मदद क्यों नहीं आ रही । इस चिंता ने उनको किंकर्त्तव्यविमूढ़ बना दिया ।

इधर कालपी से तात्या टोपे पंद्रह हजार फौजें लेकर निकला और डबल कूच करता हुआ झाँसी पहुँचा । रातोंरात मोर्चा बाँधकर उसने तोपों में पलीता लगाया । इधर कप्तान साहब भी अंग्रेजी फौज लेकर उससे लड़ने के लिए आ धमका । वह लड़ाई का दसवाँ दिवस था । झाँसी के सब लोग इस लड़ाई पर ही झाँसी के भाग्य का निर्णय समझते थे । सब लोग युद्ध देखने के लिए परकोटे की दीवार पर आकर जम गए । दोनों ही ओर के सिपाही अपनी जान होम कर लड़ रहे थे । किसी को भी अपना भान नहीं रहा । आमने-सामने की लड़ाई थी । प्यादे से प्यादा, सवार से सवार जूझ रहा था । बिगुल, नरसिंघों, बंदूकों, तोपों इत्यादि की आवाज हवा में धुंध-सी बनकर छा गई थी । झाँसी वाली बाई और उसके सरदार लोग दूरबीन लगाकर देख रहे थे । परंतु झाँसी के दुर्भाग्य से कहो या तात्या टोपे की अकुशलता से कहो, या हिंदी सिपाहियों के नादान और अशूर होने से कहो, तात्या टोपे की फौज टूटने लगी । सिपाही लोग भागने लगे । अंग्रेजी फौजों ने मोर्चों पर से तोपें निकालकर भागने वालों पर निशाना साधा । रिसाले सवारों ने एकदम हल्का बोल दिया । यह देखकर स्वयं तात्या टोपे भी चौवीसपने और छत्तीसपने की तोप वहीं छोड़कर निकल लिया । विजय मिलने से अंग्रेजों की हिम्मत दुगुनी-चौगुनी हो गई । उन्हें लड़ाई का सामान भी मिला । झाँसी वालों में हाहाकार मच गया । सब लोग दुख, भय और निराशा से टूट गए ।



झाँसी का किला

परंतु निराशा की शक्ति भी कुछ विलक्षण ही होती है । सिपाहियों को जब यह विश्वास हो गया कि झाँसी अंग्रेजों के हाथ लगेगी और वे हमारे ऊपर जरा भी दया न करेंगे । इस विचार से उनका हौसला और दूना हो गया । बाई साहब ने सब सरदारों को इकट्ठा करके कहा कि आज झाँसी लड़ी तो कुछ पेशवा के बल पर नहीं और आगे भी उसे किसी की मदद की जरूरत नहीं । ऐसा निश्चय करके सरदार लोग और स्वयं बाई साहब परकोटे की दीवारों पर फिर से मेहनत करने लगे । उसी दिन रात में अंग्रेजी गोलंदाजों ने फिर भयंकर हमला किया । शहर और किले पर लाल-लाल गोलों की झड़ी लगा दी । किले के सब लोग रातभर जागते हुए बैठे रहे ।

रात गई और युद्ध का ग्यारहवाँ दिवस आ पहुँचा । बाई साहब तलवार बाँधे हुए चारों तरफ सबको हिम्मत बँधा रही थीं । गोलंदाजों को बख्शीशें दी गईं । जो तोपें बंद हो गई थीं, वे फिर शुरू हो गईं । अंग्रेजों ने अपनी सारी गरनाली तोपें किले पर ही लगा दीं । तब तो महलों में हाहाकार मच गया ।

उस दिन महलों पर ही अंग्रेजी तोपों की शनि दृष्टि थी; परंतु खास महल को कोई नुकसान नहीं पहुँचा । बादशाही जमाने का चूने से बना हुआ मजबूत महल कुछ यों ही टूट सकता था ? जहाँ गोला पड़ता वहाँ उतना बड़ा छेद हो जाता । यों दो-तीन छतों में भंबक हो जाते थे और गोला नाकाम हो जाता था । परंतु ऐसा नुकसान भी कुछ कम न हुआ था । महल के हरेक दालान पर गोले पड़ने लगे । तब तो सब लोग घबराकर नीचे की एक कोठरी को निर्भय स्थान समझकर उसमें भरने लगे । उस कोठरी के ऊपर पाँच मंजिलें थीं । भरते-भरते उसमें चौंसठ आदमी जमा हो गए, और वह ठसाठस हो गई । मैं भी उस कोठरी में था, दासियाँ भी थीं । गर्मी और भीड़ तथा प्राणों के भय के कारण शरीर से पसीना छूट रहा था । साँस छोड़ने की भी जगह न थी । मैं तो बिलकुल घबरा गया था । पूरी चार घड़ी उसमें काटी । मृत्यु के भय से बढ़कर दूसरा कोई भय नहीं । सबके ही जीव कसमसा रहे थे । परंतु बाई साहब के गोलंदाजों ने बड़ी दिलेरी और फुर्ती दिखाई । अंग्रेजों की तोपों को खाली कर दिया । तब कहीं जाकर महल में गोले पड़ने बंद हुए और सब लोग उस कोठरी से बाहर निकले ।

इस तरह लगातार ग्यारह दिन तक लड़ाई चली । फिर शाबाश है उस स्त्री को; उस रात को रोज की तरह बाई साहब शहर के और किले पर गश्त लगाकर जब बंदोबस्त कर रही थीं, इतने में ही एक भेदिए ने आकर खबर दी कि दो-ढाई लाख रुपयों का गोला-बारूद खर्च करके भी अंग्रेज सरकार को जय मिलती दिखाई नहीं देती । उनका गोला-बारूद भी अब चुक गया है । इसलिए कल पहर भर लड़ाई लड़ने के बाद उनका लश्कर उठ जाएगा । यह सुनकर बाई साहब को कितना आनंद हुआ होगा, यह तो उनका मन ही जानता होगा । उनके चेहरे पर और भी दमक आ गई और उनकी शक्ति और हिम्मत दुगुनी हो गई । उस रात को दो बजे के लगभग निश्चिंत होकर वह गहरी नींद में सो गईं । लेकिन बाई साहब के ग्रह अच्छे नहीं थे । लगभग पौ फटने के समय शहर के दक्षिण बाजू की तोप एकाएक बंद पड़ गई । यह खबर लेकर एक आदमी आया और बाई साहब को जगाकर उसने सारा हाल कहा । सारी हकीकत सुनकर सबके पेट में पानी हो गया और हमारे प्राण भीतर-ही-भीतर घुटने लगे । हर ! हर ! अट्ठासी पहर तक बड़ी बहादुरी से लड़ने के बाद अंत में अंग्रेजों ने शहर को सर कर ही लिया । छठी मंजिल पर जाकर मैं देखने लगा । उस समय सवेरे का धुँधला प्रकाश पड़ रहा था । देखा, हजारों मजदूरों के सिर पर घास के गट्ठर रखाए उनके पीछे-पीछे गोरे सिपाही शहर की दीवार चढ़े आ रहे हैं । देखते-ही-देखते वे ऊपर आ पहुँचे । घास वालों ने दीवार के पास पहुँचते ही अपने सिर के गट्ठर-एक-पर एक फेंककर सीढ़ी बना दी और उसके ऊपर से होकर गोरे सिपाही उतरने लगे । दीवार पर बाई साहब

के सिपाहियों में से कुछ तो भाग निकले और जो शूर थे, उन्होंने यथाशक्ति गोरों को रोका । परंतु वे बेचारे बहुत थोड़े थे, इसलिए मार डाले गए । दस-बारह मिनट के अंदर-ही-अंदर हजारों गोरे शहर की दक्षिण दीवार पर दिखाई देने लगे ।

बाई साहब ने जैसे ही हकीकत को समझा वैसे ही सहस्र बिच्छुओं के डंक मारने के समान उन्हें दुख हुआ । चेहरे की आब उतर गई । अक्ल गुम हो गई । सोने के पहले जो खबर सुनी थी, वह क्या थी ! और अब यह खबर ! इसका अर्थ क्या है ? भय, दुख और आश्चर्य से चित्त ऐसा उद्विग्न हुआ कि क्या करना चाहिए, उन्हें सूझता ही न था ! बाहर आकर शून्य दृष्टि से वे दक्षिण दिशा की ओर देखने लगीं । जहाँ हजारों गोरे सिपाही बढ़े चले आ रहे थे । परंतु बाई साहब हम भट्ट भिक्षुकों की तरह कुछ नादान थोड़े ही थीं, भय और विचारशून्यता का क्षण दूर गया; तुरंत ही बाई साहब को शूरत्व का आवेश आ गया । पंद्रह सौ विलायती अर्थात मुसलमान अरब, जो बहुत दिनों से उनके यहाँ नौकर थे उन्हें लेकर तलवार खींचकर वे तुरंत ही किले से नीचे उतरीं और बड़े दरवाजे से दक्षिण की ओर चल दीं । गोरे लोग शहर में आ गए थे । उनकी तलवारें भी म्यानों से बाहर निकल आई थीं । सबके पीछे से चलते हुए बाई साहब सेना के मध्य से होकर तलवार लिए आगे बढ़ रही थीं । गोरे और विलायती लोगों की तलवारों में गाँठ पड़ते ही चारों ओर भीषण दृश्य उपस्थित हो गया कि उसकी उपमा केवल महाभारत के युद्ध से ही दी जा सकती है । सौ तक गिनती गिनने में देर लगेगी, परंतु जोश में भरे हुए विलायतियों को सैकड़ों गोरे मारने में उतनी भी देर न लगी । बाकी जो बचे थे, वे शहर में इधर-उधर भागकर घरों और पेड़ों की आड़ से बंदूक तानने लगे । पीछे से जो गोरे लोग आ रहे थे, उन्होंने भी तलवार न चलाकर दूर से ही गोलियाँ मारनी शुरू कीं । उस समय बाई साहब के साथ एक पचहत्तर वर्ष का वृद्ध और पुराना सरदार था । वह आगे आकर बाई साहब का हाथ रोककर कहने लगा, "महाराज, इस समय आगे जाकर गोली का शिकार होना व्यर्थ है । गोरे लोग इमारतों की आड़ लेकर गोलियाँ चला रहे हैं । सैकड़ों गोरे शहर के अंदर आ गए हैं । इसलिए शहर के सब फाटक उन्होंने खोल दिए हैं । इस समय लड़ने से कुछ हासिल नहीं । आप किले में जाकर दरवाजा बंद करके फिर कोई युक्ति सोचें । हमें समय को फिर से लौटा लाना है ।" यह कहकर उसने बाई साहब को वापस भेज दिया और हाँक मारकर विलायतियों से भी लौटने को कहा, सब लोग किले में पहुँचकर फाटक बंद करके बैठ गए ।

इधर चारों ओर के फाटकों से गोरे अंदर आने लगे और विजन करना शुरू किया । पाँच बरस से लगाकर अस्सी बरस तक जो पुरुष दिखा, उसे गोली या तलवार से पार उतार दिया । शहर के एक भाग में आग भी लगा दी । आग पहले हलवाईपुरे से लगाई गई । उस समय शहर में ऐसा आर्तनाद फैला कि जिसका पार न था । भेड़िए जब भेड़ों के झुंड पर झपटते हैं, तब भेड़ों के प्राणों की जो दशा होती है; वही इस समय लोगों की थी । भय से आतुर होकर लोग बुद्धिहीन से इधर-उधर भाग रहे थे । भागते-भागते में ही बहुत से गोलियाँ खाकर मुर्दे हो गए । कोई इस

गली में लपका, कोई घर के तहखाने को भागा, कोई दाढ़ी-मूँछें साफकर स्त्री वेश धारण करके बैठ गया; कोई खेतों में जा छिपा । इस तरह अपने प्राण बचाने के लिए जिसे जो जुगत सूझी, वही करने लगा ।

दूसरी ओर गोरे लोग घरों में घुसकर मनुष्यों की हत्या और सोने चांदी की लूट करने लगे। उनके घरों में घुसते ही जो दिखाई दिया उस पर सीधी बंदूक तन जाती थी, यदि उसने चटपट अपना माल-असबाब गोरों के हवाले कर दिया, तब तो भली-भला, नहीं तो प्राण यमलोक में ।

इधर बाई साहब किले में आकर बड़ी शोक विह्वल होकर दीवानखाने में बैठ गईं । उस तेजस्वी स्त्री की उस समय की स्थिति और इसके अतिमानवीय पराक्रम का यह अत्यंत दुखकारक परिणाम देखकर हम सबके हृदय भर आए । सब लोग इधर-उधर चिंताक्रांत होकर धीरे-धीरे यही बातें करने लगे कि अब बाई साहब को क्या करना चाहिए, परंतु बाई साहब के पास कोई भी नहीं जाता था । एक पहर के बाद शहर के हाल-चाल लेने के लिए बाई साहब छत पर आईं । उस समय शहर का जो दीन दृश्य उनकी आँखों के सामने आया, उसे देखकर उनके आँसू न रुक सके । बाई साहब को यह लगा कि मेरे कारण इन बेचारे निरपराध प्राणियों की जानें जा रही हैं। स्त्रियों का हृदय बड़ा कोमल होता है । बाई साहब का हृदय दुख और करुणा से इतना ओत-प्रोत था कि उन्हें यह लगने लगा कि मैं महापातकी हूँ, यह निश्चय उनके मन में कायम हो गया । सब लोगों को बुलाकर उन्होंने कहा, "मैं महल में गोला-बारूद भर कर इसी में आग लगाकर मर जाऊँगी, लोग रात होते ही किले को छोड़कर चले जाएँ और अपने प्राण की रक्षा के लिए उपाय करें ।" जिस वृद्ध सरदार ने सवेरे बाई साहब को किले लौटाया था, वही इस समय भी आगे बढ़ और बाई साहब को दीवानखाने ले जाकर कहने लगा, "महाराज आप जरा शांत हों । ईश्वर ही शहर पर यह दुख लाए हैं; मनुष्य उसका कोई इलाज नहीं कर सकता । आत्महत्या करना बड़ा पाप है । दुख में धैर्य धारण करके गंभीरतापूर्वक सोचना चाहिए कि उससे बचने के लिए आगे कोई रास्ता निकल सकता है या नहीं । आप शूर हैं, रात में तैयारी करके शहर के बाहर निकल चला जाय । मौका पड़ने पर शत्रु से दो हाथ लड़ते हुए घेरा तोड़कर पेशवा से मिला जाय । इस बीच में यदि मृत्यु आ गई तो बहुत अच्छा । यहाँ आत्महत्या करके पाप संचय करने की अपेक्षा युद्ध में स्वर्ग जीतना उत्तम है ।" इन शब्दों से बाई साहब को बहुत कुछ धीरज बँधा और वे स्वस्थ हुईं ।

इधर बाई साहब रात के बारह बजे सब तैयारी करके किले के बाहर निकलीं । मोरोपंत तांबे आदि जितने सगे-संबंधी थे, वे सब भी हथियारबंद होकर घोड़े पर सवार होकर साथ हो गए । हरेक की कमर से मोहरें बँधी थीं । खजाने में जो कुछ अर्थ था, वह सब एक हाथी पर लादा गया और उसे बीच में किया गया । साथ में दो सौ पुराने और जान पर खेल जाने वाले सरदार थे । इसके अलावा सवेरे अंग्रेजों के छक्के छुड़ाने वाले एक हजार दो सौ विलायती बहादुर भी चल रहे थे । बाई साहब पाजामा, स्टाकिन बूट वगैरह पुरुष वेश धारण किए हुए थीं और

हरबे-हथियार से पूरी तरह लैस थीं । बाई साहब जिस घोड़े पर सवार थीं, वह एकदम सफेद था, ढाई हजार रुपए में खरीदा गया था और राजरत्न के समान ही उसका आदर था । उस घोड़े पर बैठकर पीछे रेशमी दुपट्टे से अपने बारह वर्ष के दत्तक पुत्र को बाँधकर, और साथ में केवल एक रुपए की रेजगारी लेकर महारानी बाहर निकलीं । शाबाश है उस स्त्री को !

जैसे ही बाई साहब शहर से निकलीं कि अंग्रेजों को खबर मिली । तुरंत हो-हल्ला करके सबको सावधान किया और तोप चालू की । बाई साहब के पास बंदूक थी । वे उसे दागती हुई घोड़ा फेंककर भागीं । उस हुल्लड़ में दोनों तरफ के बहुत से कट गए । जो बचे थे, वे अँधेरे में रास्ता भटककर जहाँ सींग समाया, वहाँ भागे । चारों ओर सवार ही सवार थे । उसमें अंग्रेजों को यह पता ही नहीं लग पाया कि बाई साहब का घोड़ा कौन-सा है । बाई साहब ने जो घोड़ा फेंका तो वह पल भर में अंग्रेजी फौजों का घेरा तोड़कर उन्हें बहुत पीछे छोड़ता हुआ आगे निकल गया । इस तरह बाई साहब दुश्मन के घेरे पार करके कालपी के रास्ते पर चल दीं ।

X X X

कालपी का रास्ता पकड़कर मंजिल-दर-मंजिल मारते हुए एक दिन साँझ को एक खेड़े में जाकर बस्ती की । कालपी वहाँ से लगभग छह कोस रहा होगा । गाँव के बाहर वृक्ष के नीचे उतरकर भोजन बना-खाकर हम लोग सो गए । प्रत्यूष बेला में एकाएक हल्ला सुनकर आँख खुल गई । उठकर देखता हूँ तो सैकड़ों सवार रास्ता उधेड़ते हुए चले आ रहे हैं । हम जल्दी-जल्दी अपना सामान लपेट-लपाट कर, यह सोचते हुए कि भगवान ! अब जाने कौन-सा संकट आएगा ? सिपाही लोगों के साथ ही भागे । थोड़ी देर बाद समझ में आया कि चरखारी में पेशवा की अंग्रेजों से मुठभेड़ हुई थी, तो उसमें पेशवा की हार हुई । उनके साथ झाँसी वाली रानी भी थीं, वह फौज लौटकर अब फिर कालपी जा रही थी । तब हम जरा निश्चिंत हुए । पौ फटते-फटते एक कुएँ के पास जाकर बैठ गए । हम लोग बैठे ही थे कि चार-पाँच सवार कुएँ की तरफ से होते हुए निकले । उसमें झाँसी वाली रानी भी दिखाई दीं । सारी पोशाक पठानी थी और शरीर धूल से भर रहा था । मुख किंचित आरक्त, म्लान और उदास था । उन्हें बहुत प्यास लगी थी और घोड़े से उतरकर हमारे पास आकर पूछने लगीं, "आप लोग कौन हैं ?" मैंने तुरंत ही आगे बढ़कर हाथ जोड़कर कहा, "महाराज ! आप ही की प्रजा हैं ।" बाई साहब हमें पहचान गईं । मैं मटके को जैसे ही कुएँ में छोड़ रहा था कि बाई साहब बोलीं, "आप विद्वान हैं, अतः मेरे लिए पानी न खींचें । मैं ही खींचे लेती हूँ ।" उनके ये उदारता से भरे हुए शब्द सुनकर मुझे बड़ा बुरा लगा । परंतु निरुपाय होकर रस्सी और मटका रख दिया । बाई साहब ने पानी खींचकर उसी मिट्टी के पात्र से अंजलि बाँध कर पानी पिया । दैवगति बड़ी विचित्र है । फिर बड़ी निराश मुद्रा में कहने लगीं, "मैं आध सेर चावल की हकदार, मेरी ऐसी रांड़मुड़ को विधवा धर्म छोड़कर यह सब उद्योग करने की कुछ जरूरत नहीं थी, परंतु धर्म की रक्षा के लिए जब इस कर्म में प्रवृत्त हुई हूँ तो इसके

लिए ऐश्वर्य, सुख, मान, प्राण सबकी आशा छोड़ बैठी हूँ। न जाने कौन-से पाप के फल से ईश्वर हमें यश नहीं देते। चरखारी में बड़ी लड़ाई हुई; परंतु जय शत्रुओं को ही मिली। अब वे कालपी की तरफ बढ़े आ रहे हैं। जल्दी ही वहाँ भी जंग होगी। जो कुछ लिलार में लिखा होगा, सो तो होगा ही।" यह कहकर बाई साहब उठीं। हम भी खड़े हो गए। बाई साहब घोड़े पर सवार हुईं तब एकाएक उन्होंने पूछा, "कालपी क्यों जा रहे हैं ?" उनके पूछने पर मैंने कहा, "कालपी में बहुत से दक्षिणी हैं। उनसे कुछ दक्षिणा लेकर यमुना पार करके गंगा स्नान के लिए ब्रह्मावर्त्त क्षेत्र जाना चाहते हैं।"

"अच्छा तो तुम कालपी में गोदाम पर आना !" यह कहकर बाई साहब ने घोड़ा बढ़ाया।

कालपी में तीन दिन लड़ाई चली। पेशवा की फौजें लड़ाई के लिए बेकार हो चुकी थीं। दिल्ली, लखनऊ, झाँसी वगैरह में अंग्रेजों की जय होने से गदरवाले बहुत कुछ निराश हो चुके। इसलिए बहुत से पुराने तजुर्बेकार पल्टनी लोग अपने प्राणों के भय से पल्टनें छोड़कर चले गए थे। अंग्रेज सरकार ने उनके नाम पहले से ही जगह-जगह जाहिरनामे में लगा रखे थे। इसलिए भेष बदलकर वे लोग दूसरे-दूसरे काम-धंधे करने लगे। जो नए लोग रखे गए थे, वे बिलकुल नौसिखिए थे। उन्हें ढंग की कवायद भी न आती थी; इसलिए टिकाऊ नहीं थे। इतना ही नहीं, गदर में अच्छे और दमदार लोग जब मिलने को राजी नहीं हुए तो नए सिपाहियों, चोरों, लुच्चों और लुटेरों की भर्ती होने लगी। उनका लक्ष्य लड़ाई न होकर लूट अधिक थी। तीसरे दिन जब उन सिपाहियों को लगा कि जीत अंग्रेजों की ही होगी और पेशवा टूटेंगे तो वे लोग सैकड़ों की तादाद में लड़ाई का मैदान छोड़कर शहर में आ घुसे और दंगा, लूट, अनीति मचाई, चीनी की तो सड़क पर बिछायत बिछ गई। अनाथ स्त्रियों की बड़ी ही दुर्दशा की गई। ये लोग लूटपाट कर ही रहे थे कि इतने में अंग्रेज लोग सारे मोर्चे जीतकर शहर में आ गए। उन्हें देखते ही ये डाकू काले सिपाही जहाँ सींग समाया, उधर ही भाग निकले। सैकड़ों की हत्या हुई। तात्या टोपे, झाँसी वाली बाई और राव साहब तो अपना रंग फीका देखकर पहले ही जंगलों में निकल गए थे।

X X X

ग्वालियर में शिंदे सरकार के आश्रय में जो लड़वैये लोग थे वे तात्या टोपे के साथ चले गए थे। कालपी में पेशवा की हार होने पर वे सब पल्टनें ग्वालियर की ओर पलट पड़ीं। मुरार में शिंदे सरकार की फौजी छावनी थी। उन्होंने वहाँ जाकर मोर्चा बाँधा और शिंदे को कहलाया कि या तो खर्चे के लिए हमें चार लाख रुपए दो, नहीं तो मैदान में आओ। उस पर दिनकर राव राजवाड़े, दीवान ने जवाब दिया कि हम लड़ाई के लिए तैयार हैं। जयाजी महाराज शिंदे, उनके दीवान आदि सब फौजें लेकर मुरार नदी के पार पहुँचे। शिंदे की तरफ के बहुत पल्टनियों ने यह कहा कि हम लड़ाई का ठाट तो बाँध देंगे; लेकिन पेशवा पर गोली नहीं छोड़ेंगे क्योंकि वे आपके और हमारे, दोनों के मालिक हैं। इतने में ही गदरवाली फौज की तरफ से तोप में पलीता दे दिया

गया और मारू बाजे बजने लगे । शिंदे और दीवान ने अपनी ओर के गोलंदाजों को बहुत-बहुत कहा, मगर उन्होंने जवाब दे दिया कि हम नमकहरामी नहीं करेंगे । शिंदे राजा और दीवान दोनों ही घोड़े से उतर पड़े और अपने हाथों तोप में बत्ती लगाई। परंतु तोपों के अंदर तो बाजरे की थैलियाँ भरी हुई थीं । तब तो शिंदे राजा और दीवान राजवाड़े हक्का-बक्का हो गए और तुरंत ही घोड़े पर सवार होकर आगरा का रास्ता पकड़ा ।

इधर लड़ाई की चुटपुट तो हो ही चुकी थी, सौ-दो सौ आदमी मारे-काटे गए कि इतने में शिंदे और उनके दीवान के भाग जाने की खबर चारों ओर फैल गई । शिंदे के सिपाही यह सुनते ही इधर-उधर भाग खड़े हुए । लड़ाई बंद हो गई । श्रीमंत पेशवा की ओर शहनाई बजने लगी और उन्होंने लश्कर की ओर कूच किया । शिंदे सरकार ने फूलबाग नामक एक बड़ा ही रमणीय बाग लगवाया था । श्रीमंत वहाँ एक रात बंगले में ठहरे । गदरवालों ने सारा बगीचा उजाड़ डाला । हाथी, ऊँट वगैरह इधर-उधर छोड़ दिए गए, सो पेड़-फूलों की दुर्दशा हो गई । बंगले के अंदर लगे हुए शीशे तक फोड़ डाले । शहर में सर्राफा और दुकानें फटाफट बंद हो गईं । सड़कों पर भूत लोटने लगा । फिर श्रीमंत ने डौड़ी पिटवा कर सब दुकानें खुलवाईं और रीति मत फिर से व्यवहार शुरू हुआ । शहर के राजमहलों में पहले किसे भेजा जाए, श्रीमंत राव साहब इसका विचार कर रहे थे तभी झाँसी वाली रानी ने स्वयं वहाँ जाने की आज्ञा माँगी । राव साहब ने कहा कि शत्रु का शहर है, महलों में बड़े धोखे होंगे । बंदोबस्त करके जाना । तब बाई साहब दो सौ सवारों को लेकर बड़े गंभीर भाव से शहर में आईं । सवारी सर्राफे और प्रमुख बाजारों से चली जा रही थी । बाई साहब के सम्मान में सिपाही आगे बंदूकों से हवा में फायर करते चलते थे । इस तरह सवारी महलों में पहुँची । महल के पीछे वाले हिस्से के लोग अभी नहीं गए थे । कारण कि वे सब बायजा बाई साहब शिंदे के कारकुन थे । उन्होंने जाकर कहा कि इधर बायजा बाई साहब रहती हैं, अपने लोगों को इधर आने से रोक दीजिए । झाँसी वाली रानी ने तुरंत ही अपने लोगों को ताकीद कर दी, कि जहाँ-जहाँ बाई साहब के ताले पड़े हों, उधर तुम लोगों के जाने का कोई काम नहीं । बायजा बाई साहब चार-पाँच दिन पहले महल छोड़कर परेड की तरफ चली गई थीं ।

झाँसी वाली रानी ने महल में जाकर पहले तो वहाँ की सब चीजें अपने ताबे में ले लीं और फिर राव साहब और तात्या टोपे को खबर भेजी कि यहाँ सब ठीक है, आप चले आइए । तब राव साहब की सवारी बड़े ठाट-बाट के साथ शहर के बड़े-बड़े बाजारों से होकर धीरे-धीरे आगे चलती हुई महलों में आई । शिंदे सरकार के मुनीमों और कारकुनों ने उनको भेंट की । राव साहब ने कहा कि हम यहाँ ब्रह्मभोज कराना चाहते हैं, इसलिए कल से मुक्त द्वार भोजन का प्रबंध करो । बेसन के लड्डू और पकवानों के साथ एक-एक रुपया दक्षिणा बाँटी जाय । जब तक हम यहाँ रहेंगे, तब तक रोज यह कायदा चलेगा । मुनीमों ने हाथ जोड़कर कहा कि महाराज के हुकुम के अनुसार ही सब सरंजाम हो जाएगा ।

इस तरह बड़ी राजी-खुशी से श्रीमंत राव साहब ने वहाँ अठारह दिन बिताए ।

रोज मुक्त द्वार होता था । शहर का प्रबंध बहुत अच्छा कर रखा था, मुरार में एक पल्टन तैनात थी । लेकिन अठारहवें दिन ग्यारह-बारह बजे के लगभग अचानक बड़ी खलबली मच गई । खबर पड़ी कि आगरे से अंग्रेजी फौज ने आकर मुरार पर हल्ला बोल दिया है । उसी दम झाँसी वाली बाई, तात्या टोपे और राव साहब घोड़े पर सवार होकर एक फौज के साथ मुरार की ओर दौड़ गए ।

मुरार में घमासान युद्ध छिड़ गया । झाँसी वाली के गोली लगी, पर वह मानी नहीं । दूसरा तलवार का करारा हाथ उनकी जांघ पर पड़ा । उस समय वे घोड़े से गिरने लगीं । तात्या टोपे ने चट से उन्हें संभालकर घोड़ा आगे बढ़ा दिया । बाई साहब की मृत देह को एक जगह रखकर लोगों ने उसका दहन किया । अंग्रेजों की जीत रही । गदर वाले इधर-उधर भागने लगे । इस प्रकार रणांगण में उस मशहूर देवीस्वरूपिणी स्त्री ने मृत्यु पाकर स्वर्ग को जीता, परंतु गदर वालों की सदा उत्साह और शूरता से चमकने वाली प्रत्यक्ष वीरश्री निस्तेज हो गई ।

❑❑❑

## अभ्यास

**पाठ के साथ**

1. अंग्रेजों को किले को समझने में कितने दिन लगे ? फिर उन्होंने क्या किया ?
2. लक्ष्मीबाई को पहली बार निराशा कब हुई ?
3. शहर में गोले पड़ने से आम जनता को क्या-क्या कष्ट होने लगे ?
4. सातवें दिन सूर्यास्त के बाद क्या हुआ ? रात के समय तोपें क्यों चालू की गईं ?
5. सिपाहियों को जब लगा कि झाँसी अंग्रेजों के हाथ लग जाएगी तो उन्होंने क्या किया ?
6. बाई साहब ने सरदारों से क्या कहा ? बाई साहब के कहने का सरदारों पर क्या असर पड़ा ?
7. दसवें दिन की लड़ाई का क्या महत्त्व था ? दसवें दिन की लड़ाई का वर्णन संक्षेप में करें ।
8. भेदिए ने लक्ष्मीबाई को आकर क्या खबर दी ? लक्ष्मीबाई पर इस खबर का क्या प्रभाव पड़ा ?
9. विलायती बहादुर कौन थे? पाठ में वर्णित उनकी भूमिका का वर्णन कीजिए ।
10. लक्ष्मीबाई को वृद्ध सरदार ने किन-किन अवसरों पर सलाह दी, इसके क्या परिणाम हुए ?
11. शहर की दीवार पर चढ़ने के लिए अंग्रेजों ने कौन-सी युक्ति सोची ?
12. गोरे लोग झाँसी शहर में घुसकर क्या करने लगे ? अपने प्राण बचाने के लिए लोगों ने क्या किया ?

13. "मैं महल में गोला-बारूद भर कर इसी में आग लगाकर मर जाऊँगी, लोग रात होते ही किले को छोड़कर चले जाएँ और अपने प्राणों की रक्षा के लिए उपाय करें।" लक्ष्मीबाई ने ऐसा क्यों कहा ? इस कथन से उनके व्यक्तित्व का कौन-सा पहलू उभरता है ? अपने शब्दों में लिखें।
14. "यहाँ आत्महत्या करके पाप संचय करने की अपेक्षा युद्ध में स्वर्ग जीतना उत्तम है।" वृद्ध सरदार के इस कथन का लक्ष्मीबाई पर क्या प्रभाव पड़ा ?
15. "मैं आध सेर चावल की हकदार, मेरी ऐसी रांडमुड़ को विधवा धर्म छोड़कर यह सब उद्योग करने की कुछ जरूरत नहीं थी, परंतु धर्म की रक्षा के लिए जब इस कर्म में प्रवृत्त हुई हूँ तो उसके लिए ऐश्वर्य, सुख, मान, प्राण सबकी आशा छोड़ बैठी हूँ।" लक्ष्मीबाई के इस कथन की सप्रसंग व्याख्या करें।
16. "आप विद्वान हैं। अत: मेरे लिए पानी न खींचें।" लक्ष्मीबाई के इस कथन से उनके व्यक्तित्व का कौन-सा पहलू उभरता है ?
17. कालपी की लड़ाई का वर्णन लेखक ने किस तरह किया है ? कालपी के युद्ध के तीसरे दिन सिपाहियों ने क्या किया ?
18. लक्ष्मीबाई की मृत्यु किस तरह हुई ? उनकी वीरता का वर्णन अपने शब्दों में करें।
19. निम्नलिखित वाक्यों की सप्रसंग व्याख्या करें –
    (क) परंतु निराशा की शक्ति भी कुछ विलक्षण ही होती है।
    (ख) भेड़िए जब भेड़ों के झुंड पर झपटते हैं, तब भेड़ों के प्राण की जो दशा होती है; वही इस समय लोगों की थी।
    (ग) आत्महत्या करना बड़ा पाप है, दुख में धैर्य धारण करके गंभीरतापूर्वक सोचना चाहिए कि उससे बचने के लिए आगे कोई रास्ता निकल सकता है या नहीं।

**पाठ के आस-पास**

1. कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने लक्ष्मीबाई पर कुछ कविताएँ लिखी हैं। उनकी एक कविता **'झाँसी की रानी की समाधि पर'** यहाँ दी जा रही है –

इस समाधि में छिपी हुई है
एक राख की ढेरी।
जलकर जिसने स्वतंत्रता की
दिव्य आरती फेरी ।।

यह समाधि, यह लघु समाधि, है
झाँसी की रानी की।
अंतिम लीलास्थली यही है
लक्ष्मी मर्दानी की ।।

यहीं कहीं पर बिखर गई वह
भग्न विजय-माला-सी ।
उसके फूल यहाँ संचित हैं
है यह स्मृति-शाला-सी ।।

सहे वार पर वार अंत तक
लड़ी वीर बाला-सी ।
आहुति-सी गिर चढ़ी चिता पर
चमक उठी ज्वाला-सी ।।

बढ़ जाता है मान वीर का
रण में बलि होने से ।
मूल्यवती होती सोने की
भस्म यथा सोने से ।।

रानी से भी अधिक हमें अब
यह समाधि है प्यारी ।
यहाँ निहित है स्वतंत्रता की
आशा की चिनगारी ।।

इससे भी सुंदर समाधियाँ
हम जग में हैं पाते ।
उनकी गाथा पर निशीथ में
क्षुद्र जंतु ही गाते ।।

पर कवियों की अमर गिरा में
इसकी अमिट कहानी ।
स्नेह और श्रद्धा से गाती
है वीरों की बानी ।।

बुंदेले हरबोलों के मुख
हमने सुनी कहानी ।
खूब लड़ी मर्दानी वह थी
झाँसी वाली रानी ।।

यह समाधि, यह चिर समाधि
है झाँसी की रानी की ।
अंतिम लीलास्थली यही है
लक्ष्मी मर्दानी की ।

सुभद्रा कुमारी चौहान की एक अन्य कविता झाँसी की रानी' उपलब्ध करें और कक्षा में उसका सस्वर पाठ करें ।

2. पाठ में आए प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों की जीवनी एकत्रित करें ।
3. 1857 की क्रांति को इतिहासकारों ने विभिन्न नामों से पुकारा है । इसे गदर, सिपाही विद्रोह, प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन आदि कहा गया है । आप इसे क्या कहना चाहेंगे । कारण सहित बताएँ ।
4. 1857 की क्रांति के प्रमुख स्थलों को मानचित्र पर दिखाएँ एवं इस क्रांति के कारणों पर एक निबंध लिखें ।
5. यह पाठ 'आँखों देखा' है । इसी तरह आप अपने विद्यालय में हुए क्रिकेट या फुटबॉल मैच का आँखों देखा हाल अपने शब्दों में लिखें ।
6. पाठ का आरंभ इस प्रकार हुआ है–'चैत का महीना आन पहुँचा । गर्मी के झोंके लगने लगे । वसंत के जाने के बाद ग्रीष्म ऋतु का राज्य स्थापित हुआ ।' आप अपने अनुभव के आधार पर वसंत के जाने और चैत के आने के साथ प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों पर एक निबंध लिखें ।
7. पाठ में कुछ वाद्य यंत्रों का उल्लेख है । क्या आपने उन्हें देखा है ? इन वाद्य यंत्रों की एक सूची बनाएँ एवं अपने शिक्षक और मित्रों की सहायता से उन्हें देखने की कोशिश करें ।
8. यह पाठ 'आँखों देखा गदर' नामक मूल पुस्तक से संकलित है । स्कूल के पुस्तकालय में मूल पुस्तक मँगवाएँ और उसे पढ़ें ।
9. इस पुस्तक का अनुवाद हिंदी के प्रसिद्ध कथाकार अमृतलाल नागर ने मूल मराठी से किया है । अमृतलाल नागर की पाँच रचनाओं के नाम शिक्षक से मालूम करें एवं उन रचनाओं को पढ़ें ।
10. सफल अनुवाद वह है जो अनुवाद की तरह न लगकर मूल कृति की तरह लगे । क्या इस अनुवाद को आप सफल अनुवाद मानेंगे ? इसमें ऐसा क्या है कि आपको यह रचना मूल कृति की तरह लगती है ?

**भाषा की बात**

1. निम्नलिखित वाक्यों से विशेषण चुनें –
   (i) दूरबीन से बेचूक निशाना साधकर तोप में पलीता लगाया और तीसरे धमाके में ही अंग्रेजों के उत्तम गोलंदाज को ठंडा कर दिया ।
   (ii) ये लाल भड़के गोले रात्रि के अंधकार में गेंद की तरह इधर-उधर आसमान में उड़ते हुए बड़े विचित्र लगते थे ।
   (iii) उस दिन महलों पर ही अंग्रेजी तोपों की शनि दृष्टि थी ।
   (iv) बहुत से पुराने तजुर्बेकार पल्टनी लोग अपने प्राणों के भय से पल्टनें छोड़कर चले गए थे ।
   (v) राव साहब ने कहा कि शत्रु का शहर है; महलों में बड़े धोखे होंगे ।

(vi) इस तरह बड़ी राजी-खुशी से श्रीमंत राव साहब ने वहाँ अठारह दिन बिताए ।

(vii) शहर का प्रबंध बहुत अच्छा कर रखा था ।

(viii) कारीगर भी बड़े ही चतुर और काम में निपुण थे ।

2. निम्नलिखित शब्दों से वाक्य बनाएँ -
हलचल, हौलदिली, नाकाबंदी, जर्जर, बुर्ज, भाग्य, दूरबीन, मंजिल, भिक्षुक, किला, धूल

3. उत्पत्ति की दृष्टि से निम्नलिखित शब्दों की प्रकृति बताएँ -
चैत, ग्रीष्म, नागरिक, पल्टन, वायव्य, बहादुर, शहर, बंबों, तंबू, नाकाबंदी, परकोटा, फौज, दालान, किला, खबर, गली, तहखाना, प्राण, ब्रह्मावर्त्त -

4. 'सारी हकीकत सुनकर सबके पेट में पानी हो गया और हमारे प्राण भीतर ही भीतर घुटने लगे ।' यहाँ 'पेट में पानी होना' और 'प्राण घुटना' का क्या अर्थ है ? इन मुहावरों के प्रयोग के बिना इस वाक्य को इस तरह लिखें कि अर्थ परिवर्तित न हो ।

5. 'सर कर लिया' मुहावरा का क्या अर्थ है ? पाठ से अलग वाक्य में प्रयोग करें ।

6. 'सींग समाना' का क्या अर्थ है ? वाक्य में प्रयोग करें ।

7. इस पाठ में प्रयुक्त मुहावरों का सावधानी के साथ चयन करें और पाठ के आधार पर उनका अर्थ स्पष्ट करें ।

**शब्द निधि :**

| | | |
|---|---|---|
| बंदोबस्त | : | प्रबंध |
| गोलंदाज | : | गोला दागने वाला |
| रैयत | : | प्रजा |
| त्रास | : | भय |
| बंबा | : | पानी वाला बड़ा कनस्तर |
| नाकाबंदी | : | घेराबंदी |
| वायव्य | : | उत्तर-पश्चिम |
| बुर्ज | : | किले का सबसे ऊपरी गोलाकार हिस्सा |
| हौलदिली | : | भय, आतंक की मनोदशा |
| बुरूज | : | बुर्ज, गुंबद |
| अप्रतिभ | : | फीका, चमक विहीन |
| जर्जर | : | कमजोर, पुराना |
| पल्टन | : | सेना |
| नसेनी | : | सीढ़ी |
| ग्रास | : | निवाला |
| किंकर्त्तव्यविमूढ़ | : | वह मनोदशा जिसमें कोई उपाय न सूझे |
| नरसिंहा | : | एक प्रकार का वाद्ययंत्र जो युद्ध में बजाया जाता है |
| बिगुल | : | एक प्रकार का वाद्ययंत्र जो युद्ध में बजाया जाता है |

| | | |
|---|---|---|
| गाफिल | : | लापरवाह |
| परकोटा | : | किले की सुरक्षा दीवार |
| नादान | : | भोला |
| रिसाला | : | घुड़सवार |
| भेदिया | : | जासूस, भेद बताने वाला |
| बख्शीश | : | इनाम |
| शनि दृष्टि | : | बुरी दृष्टि |
| भंबक | : | बड़ा छेद |
| गश्त लगाना | : | पहरा देना |
| बाजू | : | बाँह, ओर |
| सहस्त्र | : | हजार |
| विजन | : | निर्जन, जनशून्य |
| दीवानखाना | : | मुख्य हॉल |
| शोक विह्वल | : | दुख से व्याकुल |
| आर्तनाद | : | दुख से भरी पुकार |
| जुगत | : | उपाय, युक्ति |
| माल-असबाब | : | सामान |
| चिंताक्रांत | : | चिंता से घिरा हुआ |
| महापातकी | : | महानीच, महापापी |
| शूर | : | वीर |
| खासमहल | : | महल का भीतरी हिस्सा जिसमें राजा-रानी रहते हों |
| लश्कर | : | सेना का पड़ाव |
| हकीकत | : | वास्तविकता |
| सर कर लेना | : | जीत लेना |
| आब | : | आभा, चमक |
| युक्ति | : | उपाय |
| निरुपाय | : | लाचार |
| दत्तक पुत्र | : | गोद लिया हुआ पुत्र |
| खेड़ा | : | निर्जन मैदान |
| किंचित | : | थोड़ा |
| आरक्त | : | लाल |
| म्लान | : | मुरझाया हुआ |
| दैवगति | : | भाग्य का लिखा |
| संचय | : | जमा, इकट्ठा |

| | | |
|---|---|---|
| अर्थ | : | धन |
| प्रत्यूष बेला | : | भोर का समय |
| लिलार | : | ललाट, भाग्य |
| दक्षिणी | : | दक्षिण में रहनेवाला |
| ब्रह्मावर्त | : | पुष्कर के आस-पास का इलाका |
| तजुर्बेकार | : | अनुभवी |
| जाहिरनामा | : | विज्ञप्ति, प्रकाशित सूची |
| नौसिखिए | : | अनुभवहीन |
| कवायद | : | परेड |
| मारू | : | युद्ध में बजाया जाने वाला वाद्य |
| कारकुन | : | कर्मचारी |
| ताकीद | : | विदित, चेतावनी, सावधान |



# कुमार गंधर्व



| | | |
|---|---|---|
| जन्म | : | 8 अप्रैल 1924 । |
| निधन | : | 1992 । |
| जन्म-स्थान | : | ग्राम-सुलेभावी, जिला-बेलगाँव, कर्नाटक । |
| मूलनाम | : | शिवपुत्र कोमकली । |
| पिता | : | सिद्धरमैय्या कोमकली ( गायक और कोमकली मठ के प्रधान ) । |
| निवास स्थान | : | देवास, मध्य प्रदेश । |
| संगीत गुरु | : | प्रो० बी० आर० देवधर ( महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संगीताचार्य ) तथा अंजनीबाई मालवेकर ( प्रसिद्ध गायिका एवं संगीत गुरु ) |
| प्रमुख कृतियाँ | : | 'अनूप राग विलास' एवं अनेक लेख, निबंध और टिप्पणियाँ पत्र-पत्रिकाओं में बिखरी, अनेक रचनाएँ अप्रकाशित ।<br>अनेक म्यूजिक कंपनियों द्वारा उनके गान के रिकॉर्ड तथा कैसेट जारी । |
| सम्मान | : | भारत सरकार की 'संगीत नाटक अकादमी' के सदस्य, भारत भवन, भोपाल के स्थाई सदस्य, कालिदास सम्मान, राष्ट्रपति द्वारा 'पद्मभूषण', विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन द्वारा डी० लिट्० की उपाधि । अनेक पुरस्कार, सम्मान एवं अलंकरण प्राप्त । |

कुमार गंधर्व 20वीं शती के उत्तरार्ध में हिंदुस्तानी शैली के भारतीय शास्त्रीय संगीत के महान गायक एवं संगीत मनीषी थे । बचपन में ही अपने पिता और परिवेश से प्राप्त नैसर्गिक गायन संस्कारों के बल पर उन्होंने अपनी गायन प्रतिभा से संगीत पारखियों को विस्मित कर दिया था । श्री गुरुकुल स्वामी ने उन्हें देव गायक गंधर्व का अवतार बताया और उसके बाद उनकी प्रसिद्धि कुमार गंधर्व के नए नाम से हो गई । मूल नाम उसकी ओट में हमेशा के लिए छिप गया । कुमार गंधर्व ने 11 वर्षों तक महाराष्ट्र के संगीताचार्य प्रो० बी० आर० देवधर से शास्त्रीय संगीत की अंतर्दृष्टि पाई । कुमार जी ने अंजनीबाई मालवेकर द्वारा भी संगीत शिक्षा पाई । 1947 से 52 के बीच के पाँच वर्षों तक वे बुरी तरह अस्वस्थ हुए और बिस्तर से जा लगे । स्वास्थ्य संबंधी कारणों से ही सपरिवार मध्य प्रदेश के देवास नामक स्थान पर निवास करते हुए औपचारिक रूप से बीमारी की हालत में वे संगीत सभाओं से जरूर कट गए थे, किंतु संगीत संबंधी उनकी अन्वेषण प्रतिभा और कल्पना रुग्णावस्था में भी निरंतर सक्रिय रही । उन्होंने मालवा लोकगीतों का निरीक्षण-परीक्षण जारी रखा । लोकसंगीत के प्रति गहन आकर्षण ने अंततः बीमारी से उबरने में भी उनकी मदद की और संगीत की दुनिया में उनका जैसे पुनर्जन्म हुआ ।

कुमार गंधर्व संगीत और गायकी की दुनिया में विवादास्पद भी रहे । संगीत क्षेत्र की परंपरागत शक्तियों

ने उन्हें एक परंपराभंजक विद्रोही के रूप में देखा । वास्तव में वे एक स्वच्छंद गायक थे और शास्त्रीय संगीत में नए-नए साहसपूर्ण प्रयोग कर रहे थे । वे यद्यपि औपचारिक रूप से ग्वालियर घराने से जुड़े हुए थे, किंतु गायकी को संगीत घरानों में ही सीमित रखने के पक्ष में नहीं थे । वे संगीत में नैसर्गिक रूप से सार्वभौम विशेषताओं और मूल्यों के पक्षधर थे । गायकी की उनकी निजी विशिष्ट शैली थी जिसमें शास्त्रीय और लोकशैली का प्रगल्भ मिश्रण था । लोकसंगीत से ही शास्त्रीय संगीत विकसित हुआ है, यह मान्यता उनमें बहुत गहरी थी । इसे उन्होंने प्रत्यक्ष अनुभव भी किया था । वे मानते थे कि लोकसंगीत के नैसर्गिक स्रोत से जुड़े रहकर शास्त्रीय संगीत सर्वदा नया और स्फूर्तिमय बना रह सकता है, वह कभी रूढ़ नहीं हो सकता । लोकसंगीत के आधार पर उन्होंने नए-नए रागों की खोज और रचना भी की । इस दृष्टि से उनके द्वारा निर्मित राग 'अहिमोहिनी', 'मालवती', 'निंदियारी', 'लग्नगंधार', 'भावमत भैरव', 'सहेली तोड़ी' आदि उल्लेखनीय हैं ।

कुमार गंधर्व की गायकी वास्तव में लंबे रियाज की उपज से कहीं ज्यादा उनकी निजी स्वर-समाधि की उपज थी ।

यहाँ प्रस्तुत पाठ एक महान गायक द्वारा, जो उतना ही बड़ा संगीत मनीषी भी हो, हमारे समय की एक दूसरी महान और अद्वितीय गायिका पर लिखा गया होने के कारण बहुत महत्त्वपूर्ण है । स्वर साम्राज्ञी लता मंगेशकर सुगम संगीत के क्षेत्र में सामयिक भारत की विलक्षण प्रतिभा हैं । यह पाठ यहाँ एन० सी० ई० आर० टी० की कक्षा 11 की पुस्तक 'वितान' से साभार संकलित है ।

◆ ◆ ◆

**"हम दक्षिण से लौटे थे । देवास में रुके उज्जैन जाते हुए । अपने घर के बाहरी बरामदे में झूले पर थे वे । हमारे अलावा मुकुल शिवपुत्र भी । हमने कहा : लगता है दक्षिण में साधारण रसिकों को भी व्याकरण का बड़ा ज्ञान है । टप्प से मुकुल ने कहा : यही तो रोना है, व्याकरण है पर कला नहीं । अपने हाथ का गिलास रखते हुए वे बोले : राजा, बिना छंद के फूल नहीं खिलता है ।"**

**( कुमार गंधर्व : कुछ गद्य कविताएँ )**

**–अशोक वाजपेयी**